International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 951-952

बाजारवादी संस्कृति की ओर बढ़ते नारी कदम

पूनम
सहायक प्रवक्ता, कन्या महाविद्यालय, खरखौदा, सोनीपत, हरियाणा, भारत।

प्रस्तावना

मनुष्य में एक मूल प्रवृत्ति है कि वह सौंदर्य की उपासना करता है। उसका रूझान सौंदर्य के अन्वेषण में अधिक होता है। जब वह अपनी शारीरिक रचना से पूर्ण संतोष का अनुभव नहीं करता तो उसे अधिक भव्य बनाने का प्रयत्न करता है और मनुष्य की इसी लालसा ने बाजारवादी सभ्यता को निर्मित किया है। आधुनिक चकाचौंध से व्यक्ति स्वयं को चारों तरफ से घिरा महसूस करता है। इस आधुनिक चकाचौंध से नारी सबसे ज्यादा प्रभावित हुई है। वर्तमान बाजारवादी संस्कृति ने मानों नारी को जकड़ लिया है। वह उससे चाहकर भी मुक्त नहीं हो पाई है। आज की उपभोक्तावादी मानसिकता हमारी संस्कृति पर सीधे चोट कर रही है। इसने साहित्य और शिक्षा का व्यवसायीकरण कर दिया है। भारतीय संस्कृति में आध्यात्मिक उन्नयन पर बल दिया गया है। उपभोक्तावाद ने व्यक्ति को भौतिकतापरक, स्वार्थकेंद्रित और शरीर भोगी बना दिया है। इस बाजारवादी परिवेश में मानव एक वस्तु की भांति है, जिसका वस्तुओं की भांति जैसे क्रय–विक्रय हो रहा है। भारतीय संस्कृति में सत्–चित्–आनंद पर, आंतरिक सौंदर्य पर, माधुर्य पर बल दिया गया है। उपभोक्तावादी सभ्यता में परिधान और सौंदर्य के नाम पर अभद्र प्रदर्शन हो रहा है। इस संबंध में सबसे अधिक आपत्तिजनक तथ्य यह है कि इस मानसिकता ने नारी के भारतीय आदर्श को आघात पहुँचाया है।

भारतीय संस्कृति एक दृष्टि भी है और दिशा भी तथा दिशा बोध भी। भारतीय विद्वानों ने संस्कृति को भारतीय चिंतनधारा के अनुकूल ही परिभाषित भी किया है। डॉ. ब्रह्मदत्त अवस्थी का मानना है– ''किसी भी राष्ट्र के लिए 'संस्कृति' की वही महत्ता है, जो शरीर के लिए 'आत्मा' की है। संस्कृति राष्ट्र रूपी शरीर में आत्मा है। जिस प्रकार 'आत्मा' शब्द से मानव–हृदय की अदृश्य शक्तियों और उदात्त गुणों का बोध होता है, उसी प्रकार संस्कृति शब्द से मानव जाति के परंपरागत अंतर्निहित संस्कारों का बोध होता है। संस्कृति मानव मन की आंतरिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति है। संस्कृति वह गुण है, जो हम में व्याप्त है। संस्कृति जीवन की एक शैली है, जो शताब्दियों से संचित और परिष्कृत होती हुई, हमारे अंदर समाई रहती है। हम जन्म लेते हैं तो उस शैली को अपने साथ लाते हैं। जाते हैं तो शैली साथ ले जाते हैं। पुनः जन्म लेने पर शैली साथ लगी रहती है। बस परिवर्धन और संशोधन चलता है। जिसकी रचना और विकास में अनेक सदियों के अनुभव गहराई से पैठे हुए हैं। वह तो आत्मा का वैशिष्ट्य बनकर आई है। यह तो वह अंतश्चेतना है जो समाज के प्रत्येक घटक में समान रूप से विद्यमान है और आज के घटकों के प्रत्येक कर्म, प्रत्येक व्यवहार, प्रत्येक संबंध और प्रत्येक सोच में व्याप्त होती है।''[1] डॉ. शैलेंद्रनाथ पांडेय ने भी माना है कि संस्कृति किसी देश, जाति अथवा राष्ट्र के समष्टिगत संस्कारों की परंपरागत विरासत होती है।[2] आज वस्तुवाद, भौतिकवादी मानसिकता ओर सोच, भड़कीले लिबास, भद्दे विज्ञापन, सस्ती मूल्यहीन रचनाधर्मिता, आधुनिक सभ्य संस्कृति की पहचान बन गए हैं। 'वसुधैव कुटुंबकम्' का नारा भारत ने ही सर्वप्रथम दिया था। भूमंडलीकरण का विचार एक उपयोगी विचार है परंतु इसका स्वरूप हमारी संस्कृति पर कुठराघात कर रहा है। डॉ. कमलकिशोर गोयनका ने तो स्पष्ट कहा है कि ''भूमंडलीकरण ने विश्व को एक गांव में बदलना शुरू कर दिया है। यह व्यवहारिक भाषा में ऐसा उदारीकरण है, ऐसी उन्मुक्त बाजारू संस्कृति है, जो विश्व को एक इकाई बना रहा है। मनुष्य की संस्कृति के लिए यह एकदम नया अनुभव है। यह अनेक देशों की प्राचीन और नवीन दोनों ही संस्कृतियों के अस्तित्व के लिए भयंकर संकट है। भारत में स्वदेशी व्यापार और स्वदेशी संस्कृति की रक्षा का आंदोलन शुरू हो गया है, जो गांधी जी के स्वदेशी आंदोलन जैसा शक्तिशाली तो नहीं है परंतु संकट उससे बड़ा है। भारत सरकार ने विदेशी व्यापारियों और पूंजीपतियों के लिए अपने दरवाजे खोल दिए हैं और अब तेजी से अमरीकन, चीनी, जापानी, कोरियन वस्तुएं भारी मात्रा में देश में आ रही हैं और साथ में अपनी संस्कृति भी ला रही हैं।''[3] आधुनिक कहे जाने वाले सभी समाजों में संरचनागत स्थितियां और पितृसत्तात्मक आचार संहिताएं लगभग एक जैसी हैं, आधुनिक दृष्टिबोध और प्रगतिशीलता के तमाम दावों के बावजूद आज भी स्त्री की स्थिति मे कोई बहुत बड़ा क्रांतिकारी परिवर्तन घटित नहीं हो सका है। आज भी उसकी स्थिति अनेकानेक स्थानों पर खासकर पारिवारिक ढ़ांचे के भीतर दोयम दर्जे की ही सिद्ध की जाती है। इसी के साथ आधुनिकता के तमाम बदलते परिप्रेक्ष्य ने उसके श्रम के बोझ को भी दोहरा–तिहरा बढ़ाया है। उत्तर पूंजीवाद ने एक और भी काम किया है। उसने एक तरफ स्त्री को धनोपार्जन के लिए सस्ते श्रम के दोहन के रूप में उसका इस्तेमाल करते हुए कुछ स्थान मुहैया कराया है तो दूसरी तरफ उसे उसकी सामुदायिक सामाजिकता से काटकर अलगाव व अपरिचय की दुनियां में ढ़केल दिया है अर्थात् स्त्री को कहीं ज्यादा असंगठित स्थिति में पहुँचाया है। ऊपर से देखने पर स्त्री की स्थिति सुदृढ़ लगती है क्योंकि वह शिक्षित हुई है। आर्थिक रूप से सक्षम हुई है, कोई क्षेत्र आज उससे अछूता नहीं रहा। अनेक क्षेत्रों में आज स्त्री सफलता के झंडे गाड़कर पुरूष को चुनौती भी दे रही है। वैधानिक दृष्टि से भी उसकी स्थिति अच्छी है। किंतु व्यवहार में इन कानूनों का भी दुरूपयोग हो रहा है। स्वतंत्रता का दुरूपयोग करने वाली स्वछन्द नारियों ने भी स्त्री की प्रगति में बाधा उपस्थित की है। अधिक से अधिक पाने की लालसा में जीवन मूल्यों का ह्रास हुआ है। मानसिक शांति, परस्पर प्रेम व विश्वास में कमी आई है। परिवार टूट रहे हैं, समाज में विकृतियॉ बढ़ रही हैं। सकारात्मक सोच के अभाव में नियम कानून की अवहेलना तथा शिक्षा व धन का दुरूपयोग होने लगता है। ''मात्र वैधानिक या कानूनी अधिकार ही हमें आजादी और सुख–शांति नहीं दिला सकते। इसके लिए एक तो अधिकारों और दायित्वों में संतुलन जरूरी है। स्त्री पुरूषों में

होड़ की भावना या हर बात में पुरूषों की नकल की प्रवृत्ति स्त्रियों के लिए घातक सिद्ध हुई है।''[4]

स्त्रियों ने जहॉ से अपना संघर्ष आरंभ किया था, पुनः वहीं पहुँच गई हैं। मध्यकाल में वह वस्तुप्रायः समझी जाती थी, फिर उसने व्यक्ति के रूप में पहचान बनाने हेतु सतत् संघर्ष किए किंतु आज एक बार फिर वह वस्तुप्रायः होने लगी है। दुखद बात तो यह है कि आज वह स्वेच्छा से स्वयं को वस्तु रूप में प्रस्तुत कर रही है। आज स्त्री के शोषण का सबसे बड़ा अस्त्र है – सौंदर्यवाद। इसकी चपेट में आकर स्त्री पुनः दयनीय स्थिति में पहुॅच गई है। जहॉ मध्ययुग में स्त्री के ऊपर दूसरे अत्याचार करते थे, वहीं आज सौंदर्य के लिए वह स्वयं अपने ऊपर अत्याचार करती है। कास्मेटिक सर्जरी आदि इसी अत्याचार का हिस्सा है। त्वचा एवं बालों के रंग एवं चमक के लिए बाजार में अनेक उत्पाद हैं जो कायापलट का दावा करते हैं। जिनके साइड इफैक्ट्स को जाने–समझे बिना स्त्री खरीदती है और उपयोग करती है। इन उत्पादनों के आकर्षक विज्ञापन दूरदर्शन, रेड़ियो, पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से प्रसारित किए जाते हैं। इस संस्कृति की एक खास विशेषता है – सौंदर्य प्रतियोगिताएं। ''विश्व सौंदर्य प्रतियोगिताओं में खिताब भारतीय सुंदरियों की सुंदरता के लिए नहीं वरन् बाजार के लिए दिया जा रहा है। जिससे यहॉ की स्त्रियों में सुंदर बनने की चाह और तीव्र हो। वह उनके मकड़जाल में और गहरे फंसती जाएं। चेतना विकसित करने की जगह शरीर को सजाने का कार्य करें।[5] इन सौंदर्य प्रतियोगिताओं में विजयी होनी वाली स्त्रियों द्वारा उत्पादक अपने उत्पादकों का प्रचार करवाते हैं। इस प्रकार बाजारवाद में वह एक यंत्र (टूल) की भांति उपयोग की जाती है। जहॉ पीढ़ी दर पीढ़ी संघर्ष करने के बाद नारी कुछ स्वतंत्र हुई थी, वहीं आज वह फिर कुछ भिन्न रूप में गुलामी की जंजीरों में गिरफ्त हो रही है।

बाजारवाद ऊपर से अपना रूप कितना ही आकर्षक क्यों न बना ले वह सदैव विषमता का ही सृजन और संवर्धन करता है। जिसके दुष्परिणाम गरीब, अविकसित व विकासशील देशों को ही भोगने पड़ते हैं। ''मीडियाई धूमधाम के साथ विश्व और ब्रह्माण्ड – सुदरियों का चुनाव साबुन–शैम्पू कंपनियों का ही एक हथकंडा नहीं तो और क्या है? जिन प्रसाधनों को वे बेचेंगी (चाहे जितने भी महंगे क्यों न हों) पेट काटकर उन्हीं के इस्तेमाल से तो गांव से लेकर शहर तक की करोड़ों लड़कियां गोरी, तन्वंगी, मोहक, विश्व सुंदरी होने का सपना जिएंगी।[6] इस प्रकार एक बार पुनः स्त्री वस्तु रूप प्राप्त करने लगी हैं और उसकी खरीद–बिक्री विभिन्न स्तरों पर होने लगी है। स्त्री अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए प्रतिबद्ध होती जा रही है। वह नए–नए आय के स्त्रोत तलाश रही है। न सिर्फ बड़ी नौकरी और बड़े व्यवसाय में ही स्त्री की भागीदारी बढ़ रही है बल्कि कल तक जो काम सिर्फ घर के थे, जैसे– सिलाई, बुनाई, बड़ी, पापड़, अचार, मठरी बनाना आदि। आज इन्हें भी व्यवसाय का रूप दे रही हैं। आर्थिक सबलता स्त्री के विकास के लिए आवश्यक है। ''स्त्रियों के विकास के लिए जरूरी है कि स्त्री पक्षधर संगठनों का आर्थिक ज्ञान बढ़ाया जाए। जब भी आर्थिक नीतियां बनें उनमें स्त्रियों की अधिक भागीदारी हो।''[7] वैश्वीकरण युग में स्त्री का ज्ञान क्षेत्र विकसित व विस्तृत हो गया है। वह उन मुद्दो व विषयों की जानकारी भी रखने लगी है जो कल तक सिर्फ पुरूष की जानकारी में थे। आज वह आत्मनिर्भर हो रही है, रूढ़ियों से निकलकर अपनी पहचान बना रही है। ''स्त्रियॉ वित्तिय बाजार में होने वाले परिवर्तनों में दिलचस्पी लेने लगी है। उन्हें अपने अनुकूल बनाने की कोशिश कर रही है। राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ऐसी आर्थिक नीतियां बनवाने में प्रमुख भूमिका अदा कर रही है जो स्त्री समर्थक हो। साथ ही ग्लोबलाईजेशन के इस दौर में अधिक मानवीय है।''[8]

इस प्रकार कह सकते हैं कि बाजारवादी संस्कृति ने नारी को बहुत हद तक प्रभावित किया है। आज नारी ने इसी बाजारवादी संस्कृति के आवरण में अपने आपको सभ्य, सुन्दर व आत्मनिर्भर रूप में समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है और अपनी आर्थिक स्वतंत्रता का परिचय दिया है।

संदर्भ

1. शैक्षिक चेतना, 2000 (स्मारिका), पाश्चात्य दर्शन की कसौटी पर एक संस्कृति, डॉ. ब्रह्मदत्त अवस्थी, पृ0 37–38
2. वही– पृ. 63
3. इक्कीसवीं सदी में संस्कृति, शोधालेख, डॉ. कमलकिशोर गोयंका
4. भारतीय नारी अस्मिता और अधिकार, आशारानी व्यौरा, पृ. 17
5. आदमी की निगाह में औरत (राजेन्द्र यादव) पृ. 39
6. अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य, पृ. 220
7. स्त्रीत्ववादी विमर्श : समाज और साहित्य, पृ. 73
8. स्त्रीत्ववादी विमर्श : समाज और साहित्य, पृ. 73